IJRAR.ORG E-ISSN: 2348-1269, P-ISSN: 2349-5138

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH AND ANALYTICAL REVIEWS (IJRAR) | IJRAR.ORG

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मोहन राकेश के नाटक *आधे अधूरे* में चित्राभिनय की सम्भावना

[1]अमित सक्सेना, [2]डॉ० मंजू बघेल, [3]डॉ. पूनम रानी

[1]पी. एच. डी. शोधार्थी, [2]सहायक प्रोफ़ेसर, [3]विभागाध्यक्ष

[1]मंगलायतन विश्वविद्यालय, अलीगढ़

सारांश

शोध का मूल उद्देश्य नाट्यशास्त्र में वर्णित अभिनय पद्धति को समसामयिक नाट्य प्रयोग से जोड़ चित्राभिनय की संभावनाएँ ढूँढ़ना है। नाट्यशास्त्र के 26-वें अध्याय में उल्लेखित है की जिन भावों, चेष्टाओं और विविध अभिनय क्रियाओं को एक विशिष्ट रूप में व्यक्त करना हो तो उन्हें चित्राभिनय द्वारा किया जाये। शारीरिक क्रियाओं और भाव-भंगिमा के रचनात्मक और काल्पनिक अभिकल्पन को चित्राभिनय कहते हैं। अभिनय के चार प्रमुख प्रकारों के अतिरिक्त चित्राभिनय की कल्पना नाट्यशास्त्र में क्यों की गयी और उसके सिद्धान्त का हिन्दी रंगमंच में प्रचलित यथार्थवाद को एक नवीनता प्रदान कर पाना इस शोध की दिशा है। और क्या नाट्यशास्त्र केवल संस्कृत नाटकों के प्रदर्शन से ही जोड़ा जाता रहेगा? क्या आधुनिक नाटक की विभिन्न परतों को इस ग्रंथ में वर्णित चित्राभिनय द्वारा अन्वेषण किया जा सकता है? मोहन राकेश के कालजयी नाटक *आधे अधूरे* की संरचना और संभावित प्रस्तुति में चित्राभिनय की संभावनाओं का अध्ययन करना शोध में सम्मिलित है। चित्रात्मक एवं दृश्यात्मक बिम्ब और रंग संकेतों द्वारा भी कथानक और चरित्र के भावों को अभिनीत किया जाता है। शोध प्रणाली में *आधे अधूरे* के दृश्यों को चित्राभिनय द्वारा व्यक्त करने का प्रयास सम्मिलित है और यह जाँचना की चित्राभिनय केवल शास्त्रीय नाटकों तक सीमित नहीं है, अपितु समसामयिक यथार्थवादी नाटकों जैसे *आधे अधूरे* में भी इसकी उपयोगिता देखी जा सकती है जो प्रस्तुति की एक नवीन भाषा को स्वरूप दे सके।

मुख्य शब्द: नाट्यशास्त्र, अभिनय, चित्राभिनय, मोहन राकेश, *आधे अधूरे*, रंग संकेत, दृश्य बिम्ब

प्रस्तावना (उद्देश्य)

नाट्यशास्त्र में अभिनय कला को बहुआयामी स्तर पर वर्णित किया गया है। भारतीय नाट्य परंपरा में अभिनय की गढ़ना मात्र मनोरंजन के लिए ही नहीं अपितु दर्शक के दृष्टिकोण को भी सम्मिलित कर की गयी है। रसास्वादन और नाटक आनंद का अनुभव प्रदान कर सके इसमें अभिनय ही वह सूत्र है जो कला और दर्शक के बीच एक परस्पर संवाद साधता है। अभिनय का उपयोग *रस निष्पत्ति* के उपकरण के रूप में किया जाता है जो भारतीय प्रदर्शन कला और सौन्दर्य-शास्त्र का एक सूचक है। नाट्यशास्त्र में वर्णित चित्राभिनय की गहनता को समझना और नाटक में दृश्यात्मक विविधता जैसे प्रकृति के विभिन्न आयाम, पंचतत्व, ऋतुओं, अन्तर मन, और सूक्ष्म विचारों को अभिनय के द्वारा दर्शकों के लिए व्यक्त करने की संभावना को तलाशना इस शोध में निहित है। कैसे यह आयाम एक आधुनिक नाटक, *आधे अधूरे*, के मंचन में प्रयोग में लाया जा सकता है यह शोधकार्य में सम्मिलित है ताकि आधुनिक रंगमंच में नाट्यशास्त्र जैसे प्राचीन ग्रंथ को उपयोग में लाया जा सके।

अभिनय के प्रकार

शारीरिक गति, स्वर, भावनात्मक अभिव्यक्ति, रूप सज्जा और वेशभूषा ऐसे कलात्मक तत्व हैं जो मंच पर घटित दृश्यों को दर्शकों के मानस में प्रतिबिम्बित करते हैं। नाटक विभिन्न घटनाओं और स्थितियों में मानव स्वभाव और व्यवहार के विभिन्न रूपों को अपनाता है और दर्शकों के सामने अनुकरण के माध्यम से इसकी व्याख्या करता है। स्पष्ट अभिव्यक्ति और संप्रेषण के लिए, पात्रों, समय-सीमा, परिवेश, परिस्थिति आदि को ध्यान में रखकर अभिनय किया जाता है। डॉ० पारसनाथ द्विवेदी द्वारा लिखित *नाट्यशास्त्रम्* (हिन्दी रूपांतरित) में, जिसमें *अभिनवभारती* टीका का रूपान्तरण भी संलग्न है, अभिनय के चार प्रमुख प्रकार बताए गए हैं:

आंगिक – शरीर, मुख और चेष्टाओं से कोई भाव या अर्थ प्रकट करना।

वाचिक – अभिनेता रंगमंच पर जो कुछ मुख से कहता है, संवाद, गायन, और विशिष्ट ध्वनि जो एक अभिनेता रच सकता है जैसे नाटक में अव्याकृता वाणी का भी प्रयोग किया जा सकता है।

आहार्य – वस्त्र विन्यास, मंच विन्यास एवं निर्माण, मंच सामग्री, वस्त्र एवं आभूषण, रूप सज्जा और वेशभूषा जिससे नाटक को जीवंत और चरित्र निर्माण किया जा सके।
सात्विक – भावात्मक और संवेदन पूर्ण चेष्टा द्वारा। रस सिद्धांत अनुसार उन भावों का वास्तविक अभिनय जो सत्य सा प्रतीत हो। इसके अंतर्गत, स्वेद, स्तंभ, कंपन, अश्रु, वैवर्ण्य (त्वचा का रंग फीका हो जाना), रोमांच, स्वर भंग (आवाज़ का अस्थिर होना) आदि लघु क्रियाओं का स्वतः ही होना और आंगिक चेष्टाओं में उद्वेलन की गणना होना जो अभिनेता सूक्ष्मता से व्यक्त करता है।

इन चारों प्रकार के समेकन को *सामान्य अभिनय* कहा जाता है।

चित्राभिनय

नाट्यशास्त्र में उल्लेखित इन चार अभिनय शैलियों से भिन्न एक और शैली है जिसे चित्राभिनय कहा गया है। नाट्यशास्त्र के 26-वें अध्याय में इसका वर्णन है। आंगिक अभिनय द्वारा जिन चेष्टाओं और भावों का प्रदर्शन सामान्यता से नहीं किया जा सके उसे चित्राभिनय द्वारा कल्पनाशीलता से प्रदर्शित किया जा सकता है। (घोष, म., 1951; राकेश सोनी, 2016)

इस अध्याय में विभिन्न ऋतुओं, मेघ की दिशाएँ, नवग्रह, नक्षत्र, भूमि, चन्द्र किरण, वायु, रस, सुगन्ध, सूर्य, अग्नि, धूल, घना धुआँ, ताप, उष्मा, सूर्योदय, सूर्यास्त, विद्युत, अग्नि, लू, वर्षा, विभिन्न कीट-पतंगे, जुगनू, भँवरा, विभिन्न पशु-पक्षी, संख्या, छत्र, ध्वज, सुख भाव, स्मरण करना, अतीत, मृतावस्था, सपना आना, समय का चलन, गृह, गुहा, सागर, देवता, देव-पुरुष, अलौकिक जीव, भूत-पिशाच, मनुष्यों की विभिन्न मनोदशाएँ, मद, विषाद, आदि को व्यक्त करने का उल्लेख मिलता है। चित्राभिनय से संबंधित सात विशेष भाव जैसे आकाश वाचन-पर्दे के पीछे से बोलना, आत्मगत-एकालाप, अपावर्तित (अनन्य भाषण), जानन्तिका (अलग हटकर बोलना), कर्णोक्त (फुसफुसाना), पुनरुक्त-पुनरावृत्ति, तथा स्वप्नयित (नींद में बात करना) को अभिनीत करने की क्रिया नाट्यशास्त्र में वर्णित है। (हज़ारी प्रसाद पाण्डे, 1969)

चित्राभिनय का उद्देश्य

- जिन तत्वों और वस्तुओं को मंच पर वास्तविक रूप से दिखाना कठिन हो, उन्हें अभिनय से दर्शाना।
- मंचीय दृश्य को चित्रवत् सजीव बना देना।
- दृश्य-कला को शब्द, ध्वनि, गति के साथ जोड़ना है।
- दर्शकों की कल्पना को जागृत करना।

यह समूचा अभिनय विधान प्रतीकात्मक ही है, किंतु ये प्रतीक उस प्रकार के नहीं हैं जिस प्रकार से पाश्चात्य और यूरोपियन नाट्य पद्धतियों ने ग्रहण किए हैं। चित्राभिनय का विस्तार विविध निरूपण को व्यक्त करने के लिए प्रयोग में लाया गया है। बाकी चार अभिनय के प्रकारों द्वारा जो व्यक्त न किया जा सके उसे चित्राभिनय द्वारा प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा सकता है।

चित्राभिनय – अमूर्त की भाषा

चित्राभिनय का अंग-प्रधान व्याकरण अमूर्त तत्वों को एक भाषा प्रदान करता है। इसमें मुख्यतः उन आंगिक चेष्टाओं का विस्तार है जो हस्त मुद्राएँ और प्रतीकात्मक इशारों के माध्यम से कथा और मनोभावों को दर्शकों के समक्ष एक चित्र समान स्पष्ट करती हैं जिनसे संवाद, दृश्य-चित्रण एवं जटिल भावों का संप्रेषण किया जा सके।
चित्राभिनय द्वारा भावों, मनोदशा, परिस्थितियों और अमूर्त तत्वों का अभिनय द्वारा विविध निरूपण किए जाने की संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत है: (*अभिनवभारती,* अभिनवगुप्त)

1° हस्त मुद्राओं का उपयोग: विभिन्न हस्त मुद्राएँ, जिनके माध्यम से पात्र अपने कथ्य, भाव, वस्तु, काल, स्थान को संकेतों में प्रकट करते हैं।
2. नेत्रों द्वारा अभिनय: नेत्रों के हिलने, घूमने, दृष्टि की दिशा के बदलाव से भावों का संप्रेषण जैसे- प्रेम, क्रोध, भय, आश्चर्य।
3. अंगों द्वारा अभिनय: सिर, हाथ, पैर, कमर आदि के संयोजन से भिन्न-भिन्न चरित्र, पशु-पक्षियों, प्रकृति के दृश्य आदि का चित्रण।
4. प्रतीकात्मक चित्रण: उन दृश्यों का प्रदर्शन जो वास्तविक मंच पर संभव नहीं होते। जैसे- युद्ध, पर्वतारोहण, समुद्र यात्रा आदि को प्रतीकात्मक शारीरिक भंगिमाओं से दर्शाना।
5. चरित्र, वस्तु, भाव के चित्रण की तकनीक: कैसे किसी चरित्र की जाति, प्रकृति, अवस्था को शारीरिक मुद्राओं से बताया जाए।
6. पर्यावरण और प्रकृति का अभिनय: वर्षा, वायु, झील, पशु-पक्षी आदि को शरीर, नेत्र, मुद्राओं से प्रस्तुत करना। जैसे शेर का गर्जन, हाथी की चाल इत्यादि।
7. मनोभावों का चित्रण: नवरस के अनुकूल शारीरिक संकेत व मुद्राएँ। जैसे- प्रेम के लिए मृदु चेष्टाएँ, रौद्र के लिए उग्र भंगिमा इत्यादि।
8. शब्द एवं ध्वनि के साथ संयोजन: कैसे शब्दों, गान, वाद्य या ध्वनियों के साथ चित्राभिनय का गठजोड़ किया जाए।

चित्राभिनय का समकालीन महत्व

यह समकालीन नृत्य, नाटक, शारीरिक थियेटर और मूकाभिनय में भी प्रयुक्त होता है। कथकली, भरतनाट्यम, ओडिशी जैसे शास्त्रीय नृत्यों में इसका प्रमुख स्थान है। समकालीन दृश्य-प्रस्तुतियों में भी प्रतीकात्मकता का यह दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक युग में भारतीय नाट्य परंपरा को एक नवीन दिशा प्राप्त हुई। नए प्रेक्षागृह बने। पश्चिम के संपर्क में आने के कारण नाटक की ग्रीक-यूरोपियन परंपरा और पश्चिमी आधुनिक रंगमंच से साक्षात्कार हुआ। आधुनिक भारतीय रंगमंच के विकास में संस्कृत नाट्य परंपरा, लोक नाट्य परंपरा एवं पश्चिमी नाट्य परंपरा के तत्व रहे हैं। (कपिला वात्स्यायन)

एक जिज्ञासा अवश्य होती है - क्या तकनीकी विकास, आधुनिक प्रकाश स्रोत, चलचित्र, मल्टी-मीडिया, 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस', आदि का उपयोग ही रंग प्रयोग में आधुनिकता का प्रतीक है? आधुनिक रंगमंच में डिजिटल मीडिया का प्रयोग 'इमर्सिव' अनुभव से जोड़ कर देखा जा रहा है। सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव या नाटक के कथानक की निहित से निहित परतों को उभारा जा सके उसके लिए मल्टी मीडिया प्रॉजेक्शन का भी प्रयोग किया जा रहा है। सवाल यह रहेगा की क्या तकनीकी उपलब्धता सुगम होने के कारण और अपनी प्रस्तुति को एक अभिन्न स्वरूप देने के लिए ही इसका प्रयोग किया जाए? नाट्य निदेशक, गुरु सोमसुंदरम, अपने एक साक्षात्कार में कहते हैं की रंगमंच को टेक्नोलॉजी के प्रभाव में आकार भी अपनी जड़ों को नहीं छोड़ना चाहिए। (रामवरमन, टी॰ओ॰आई॰, 2023)

रंगमंचीय प्रस्तुतियों में न्यू मीडिया के प्रवेश को नकारा नहीं जा सकता। जैसे प्रकाश और ध्वनि से जुड़ी तकनीक और अधिक विकसित हुई है उसी प्रकार दृश्य-विन्यास भी डिजिटल मीडिया से अछूता नहीं रह गया है। (कुमार, चतुर्वेदी, 2013) यह भी सत्य है की इसके उपयोग के लिए लागत अधिक मात्रा में रहती है। देश में शौक़िया रंगमंच करने वाले नाट्य दलों की मात्रा अधिक है। व्यावसायिक तौर पर अपनी संस्थान को एक रंग मंडल की तरह चलाना जिसमें कभी प्रायोजन या संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार से अनुदान की आवश्यकता भी रहती है तो नाट्य प्रस्तुतियों में हर बार मल्टी मीडिया य न्यू मीडिया का प्रयोग में लाना अंततः धन राशि पर निर्भर हो जाता है। तो ऐसे में क्या भारतीय नाट्य परंपरा को फिर एक नवीन दृश्य विन्यास की भाषा खोजने की आवश्यकता नहीं है? अभिनेता ही वह धुरी है जिसको केंद्र में रख किसी भी प्रकार की परिकल्पना को साकार किया जाना अवश्यंभावी है।

शोध में आधुनिक रंगमंच में नाट्यशास्त्र के उस पक्ष को प्रयोग में लाया गया है जिसमें अभिनेता की कल्पनाशीलता को मूर्त-अमूर्त, व्यक्त-अव्यक्त, यथार्थ-प्राकृत, जड़-चेतन, सूक्ष्म-अपरिमित आदि कोणों से प्रयोगात्मक शोध किया गया है। इस बाबत वरिष्ठ रंगकर्मी और नाट्यशास्त्र को आज के परिवेश से जोड़ शोध को अग्रसर, श्री देवेंद्र राज अंकुर, से गहन चर्चा की गयी और यह अवलोकन रहा की चित्राभिनय को एक आधुनिक नाटक के मंचन की रचना प्रक्रिया से जोड़ सिंहावलोकन किया जाना चाहिए। इसके लिए मोहन राकेश का नाटक *आधे अधूरे* का चयन किया गया। एक कारण यह भी रहा की नाटककार ने बहुत ही विस्तार से मंच-परिकल्पना, पात्रों की कथानक अनुसार मनोदशा आदि का नाटक में निर्देश दिया है। ऐसे में इस नाटक को इन रंग संकेतों के विपरीत जा चरित्र-निर्माण और दृश्य अभिकल्पन को एक भिन्न दृष्टि से अवलोकन किया गया है।

आधे अधूरे और चित्राभिनय

मोहन राकेश कृत नाटक आधे-अधूरे वर्ष 1969 में प्रकाशित हुआ था। स्वतंत्र भारत का आधुनिकता की ओर बढ़ता प्रवाह अपने साथ कई सामाजिक पहलुओं को अपने में समेटे हुए था। मानवीय संबंधों और मध्यम-वर्ग में घटते उद्वेलन पर यह नाटक प्रकाश डालने का प्रयास करता है। अपनी इच्छाओं की पूर्ति, सम्बन्धों में पूर्णता की तलाश, अपने निजी सपनों को पूरा करने की चाहत आदि ऐसे कई आयाम इस नाटक ने प्रस्तुत करना चाहा है। इस सामाजिक नाटक का सार यह है की नाटककार ने मध्यम वर्गीय निम्न आय वाले परिवार की ज्वलन्त समस्याओं को उजागर किया है। पाँच सदस्यों के परिवार में आर्थिक कठिनाइयों तथा व्यक्तिगत असन्तोष ने संबंधों में ही नहीं अपितु घर के वातावरण में भी एक दमघोटू मनहूसियत भर दी है। इस मनोदशा का चित्रण कैसे हो?

बेरोज़गार लड़के और निठल्ले पति के कुंठित चरित्र से ऊबती स्त्री अपनी काल्पनिक 'संपूर्णता' की तलाश में इतनी अधीर हो गई है कि ऊँचे पद य अमीर पुरुषों से संबंध बना कर अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करना चाहती है परन्तु अन्ततः निराश, हताश, और क्लांत होकर उसी घर में लौटने पर विवश है। गृहस्वामी की मर्यादा से च्युत पुरुष भी घर से भागकर भी उसी में लौटने के लिए विवश है। बड़ी लड़की (बिन्नी), बेटा (अशोक), और छोटी लड़की (किन्नी) यह सब बच्चे भी घर के दमघोटू वातावरण के खिलाफ नपुंसक आक्रोश व्यक्त करते हैं। यह नाटक आधुनिक समय में यथार्थ वादी शैली को केंद्र में लिए हुए है जिसमें प्रयोगात्मक तत्व और साथ ही भारतीय नाट्य लेखन की रंग युक्ति भी प्रयोग में है। जैसे नाटक आरंभ होता है एक पात्र से जिसका नाम है 'काले सूट वाला आदमी' जो एक सूत्रधार की भांति नाटक के बारे में एक संक्षिप्त वक्तव्य देता है जो संभवतः जीवन में घटित हो रहे क्रम की ओर इशारा करता है। एक ही कलाकार नाटक में अन्य पुरुष पात्र निभाता है - (पुरुष- 1: महेन्द्रनाथ, पुरुष- 2: सिंघानिया, पुरुष- 3: जगमोहन, पुरुष- 4: जुनेजा)।

यह एक रंग युक्ति ही है... पात्रों का पुनरावृत्ति। पुरुष पात्र एक अभिनेता द्वारा निभाना, नाटककार द्वारा नाटक में निर्धारित रंग-युक्तियाँ, कथानक में सावित्री और बड़ी बेटी बिन्नी का अपने-अपने पतियों से नाखुश रहना, और जैसा पिता महेन्द्रनाथ है उसी नक़्शे कदम पर बेटा अशोक भी चल पड़ा है इसके उदाहरण हैं। बाकी जो पुरुष आते हैं वह सब सावित्री को ही एक तरह से नियंत्रित करने के प्रयास में रहते हैं। हर किसी का अपना स्वार्थ। छोटी बेटी किन्नी एक धूमकेतु सी अन्य घूमते पात्र-ग्रहों के इर्द-गिर्द भटकती रहती है। चित्राभिनय पात्रों को समझने-गढ़ने की एक संभावित प्रयोगात्मक दिशा खोल सकता है। *आधे अधूरे* नाटक के पात्र हमारे आसपास के परिवेश की विशेषकर महानगर संबन्धित समाज की विसंगतियों

को यथार्थ वादी शैली में प्रस्तुत करते हैं। इस नाटक में नाटककार ने आधुनिक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार की समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण किया है। (मधु शर्मा, 2015)

नाट्यशास्त्र आधारित चित्राभिनय *आधे अधूरे* नाटक की समसामयिक प्रस्तुति में नया आयाम प्रदान कर सकता है। नाटककार ने कथा वस्तु में नए प्रयोग भी किए हैं जो आज भी बहुस्तरीय हैं। नाटककार ने फ़िल्म शो की भाँति नाटक के मध्य में अन्तराल रखा और न ही परम्परागत नाटकों की भाँति इसका अंकों में विभाजन किया। यथार्थ के प्रस्तुतिकरण में यह विभाजन सार्थक लगता है। यह पद्धति नाटक के विभिन्न पात्रों की मनोदशा, अंतर्द्वंद्व एवं पारस्परिक विरोध को एक नयी अभिनय संरचना प्रदान कर सकती है। ऐसे कई भाव और परिस्थितियाँ हैं जो एक नाटक अपने कथानक में पिरोता है।

नाटक का विषय और चित्राभिनय को गढ़ने का विश्लेषण:

- मध्यमवर्गीय जीवन की विडंबना
- पारिवारिक विघटन
- स्त्री-पुरुष सम्बन्ध
- व्यक्तिगत चेष्टाएँ और अपूर्णता

नाट्य मंचन केवल सैद्धांतिक विश्लेषण ही नहीं बल्कि क्रिया प्रधान भी है। नाटक में निहित सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, पारिवारिक आदि परिवेश नाटक से जुड़ी सोच को विकसित कर सकते हैं पर प्रमुख उद्देश्य नाट्य प्रदर्शन ही होता है। कैसे इन सब विश्लेषणों को मूर्त किया जाए?

नाटक की प्रमुख स्त्री पात्र, सावित्री, अपने वैवाहिक जीवन में जो अपूर्णता का अनुभव करती है और एक 'सम्पूर्ण पुरुष' की अपनी आंतरिक खीझ से लिप्त खोज में अपने जीवन में आए कई पुरुषों से रूबरू होती है उसको मोहन राकेश ने एक नाटकीय युक्ति द्वारा दर्शाया है। एक ही पुरुष कलाकार चार पुरुष पात्र निभाता है और वही नाटक का सूत्रधार (काले सूट वाला) भी है। पूरे नाटक में सम्बन्धों का विघटन और जुड़े रहने की छटपटाहट आर्थिक विवशता और दोहरापन, विलगाव और खण्डित होने की प्रक्रिया और नए मूल्यों की खोज इस आधुनिक काल के सन्दर्भ में व्यक्त हुई है। सहज, स्वाभाविक और गतिशील भाषा का प्रयोग इस नाटक में किया गया है। शब्द प्रधान होते हुए भी नाटक में चरित्र निर्माण, देह गति, और शारीरिक चित्रण की बहुत सम्भावना है। रंग मंचीय भाषा, शब्द की संगति और लय-ध्वनि पर भी राकेश पूरा ध्यान रखते हैं।

एक उदाहरण देखिए – ''तुम्हारा घर है तुम बेहतर जानती हो । कम-से-कम मानकर यही चलती हो। इसीलिए बहुत कुछ चाहते हुए भी मुझे अब कुछ भी संभव नजर नहीं आता। और इसीलिए फिर एक बार पूछना चाहता हूँ तुमसे - क्या सचमुच किसी तरह तुम उस आदमी को छुटकारा नहीं दे सकती?''
पुरुष दो और स्त्री के संवादों से भी आधुनिकता का बोध होता है। पुरुष की बातों से उसकी भोग लिप्सा, कामुकता आदि बुरी प्रवृत्तियों का प्रकटन जो कि आज के युग के अधिकारी वर्ग की संकीर्ण एवं लोलुप दृष्टि की परिचायक है।
पुरुष दो अपनी कामुकता का प्रदर्शन करता हुआ कहता है- "अच्छा अच्छा...। ठीक है...देखूँगा मैं । (घड़ी देखकर) अब चलना चाहिए। बहुत समय हो गया। (उठता हुआ) तुम घर पर आओ किसी दिन। बहुत दिनों से नहीं आई।"
(स्त्री और बड़ी लड़की साथ ही उठ खड़ी होती है।) स्त्री : "मैं भी सोच रही थी आने के लिए। बेबी से मिलने।"
पुरुष दो : "वह पूछती रहती है, आंटी इतने दिनों से क्यों नहीं आई? बहुत प्यार करती है अपनी आंटियों से। माँ के न होने से बेचारी... "

उन सब को केवल वाचिक से नहीं दर्शाया जा सकता उसके लिए एक विशिष्ट भाषा की आवश्यकता हो सकती है जैसे मन की पीढ़ा को चेहरे से नहीं पर अपनी अंगुलियों के कंपन से व्यक्त करना। पात्र जिस प्रकार एक मनोदशा में कुर्सी पर बैठे हैं वह भी अभिनय द्वारा ही व्यक्त किया जाता है।

'आधे-अधूरे की भाषा आम आदमी की भाषा होते हुए भी सृजनात्मक शक्ति और रंग-तत्त्वों से पूर्ण है। 'घर-घुसरा,' 'नाशुक्रे आदमी,' 'रबड़ का टुकड़ा' - जैसे आज के समाज में प्रचलित इन शब्दों से राकेश जी ने इस नाटक की भाषा को रंगमंचीय सम्प्रेषण की सुगमता और गहन अर्थ से युक्त बनाया है। इस प्रकार के शब्दों के साथ अभिनय करने में मानसिक उद्वेलन की आवश्यकता होती है। चित्राभिनय आम बोलचाल के शब्दों और वाक्यों को हटाकर करने के लिए नहीं है अपितु वाचिक के साथ आंगिक और मनोदशा को चित्रित करने की ओर ले जा सकता है।
शब्द को अंग से विच्छेद कर देखना अभिनय की सक्षमता को क्षीण करता है। मन में पनप रहे भावों को सबसे पहले शरीर ही व्यक्त करता है। यह प्रथम माध्यम है जो दर्शक के साथ संचार स्थापित करता है। चित्राभिनय में उल्लेखित अंग संचालन विशिष्ट मनःस्थिति को एक आकार प्रदान करता है जो सूक्ष्म भी हो सकती हैं पर जिनका दर्शकों तक पहुँचना रसास्वादन की दृष्टि से आवश्यक होता है।

(चित्र 1 & 2)

(चित्र 3 & 4)

(चित्र 1-4: *आधे अधूरे* पर केन्द्रित कक्षा अभ्यास - 'कलाकार की प्रक्रिया' - श्रीराम सेंटर ऑफ पर्फ़ॉर्मिंग आर्ट्स दिल्ली, अगस्त 2025, प्रशिक्षण: अमित सक्सेना)

नाट्य प्रयोग

रंगशिल्प की दृष्टि से भी प्रयोगधर्मी नाटककार मोहन राकेश ने अभिनव एवं सार्थक प्रयोग किए हैं। पर्याप्त रंग संकेतों और रंग निर्देशों के माध्यम से नाटक के मंचीय स्वरूप को मज़बूती मिली है। नाटक का सारा दृश्यबन्ध सावित्री के घर से शुरू होकर उसी में समाप्त हो जाता है। काले सूट वाले का बार-बार नए व्यक्ति की भूमिका में आना और जगह-जगह दिए गए रंग संकेत नाटक को अभिनेता की दृष्टि से प्रयोगधर्मी बनाते हैं।

श्री देवेंद्र राज अंकुर जी ने अपनी पुस्तक *दूसरे नाट्यशास्त्र की खोज* (2021, पृ° 70) में यह कहा है की चित्राभिनय के पाठ में भरत मुनि ने 'अभिनय के दायरे में उन संभावनाओं के लिए काफ़ी छूट दी है जिन्हें अभिनेता स्वयं परिकल्पित कर सके'। अंकुर जी के मार्गदर्शन में उनके टैगोर फैलोशिप के तहत एक दृश्य-चलचित्र प्रलेखन का दायित्व इस शोधार्थी-लेखक को सौंपा गया जिसमें आंगिक अभिनय के ऊपर एक आधुनिक दृष्टिकोण से शोध करना था। इसके तहत *आधे अधूरे* नाटक के पात्रों के चरित्र निर्माण पर केन्द्रित आंगिक अभिनय को प्रयोग में लाया गया। आंगिक के अंतर्गत शारीरिक गति, मुद्राओं, चालियों और भंगिमाओं को सूचीबद्ध कर एक अभिनय-व्याकरण की सम्भावना उजागर की गयी है। कल्पनाशीलता से

विशिष्ट मनोदशा, अव्यक्त भावना और मनोवैज्ञानिक पहलू को प्रस्तुत करने की प्रणाली को चित्राभिनय की श्रेणी में डाला गया है। उपरोक्त वर्णित प्रयोग को एक लम्बे अभ्यास के पश्चात मंच पर प्रस्तुत किया गया और दस्तावेज़ीकरण किया गया।

निम्नलिखित प्रस्तुत हैं रंग प्रयोग के कुछ चित्र:

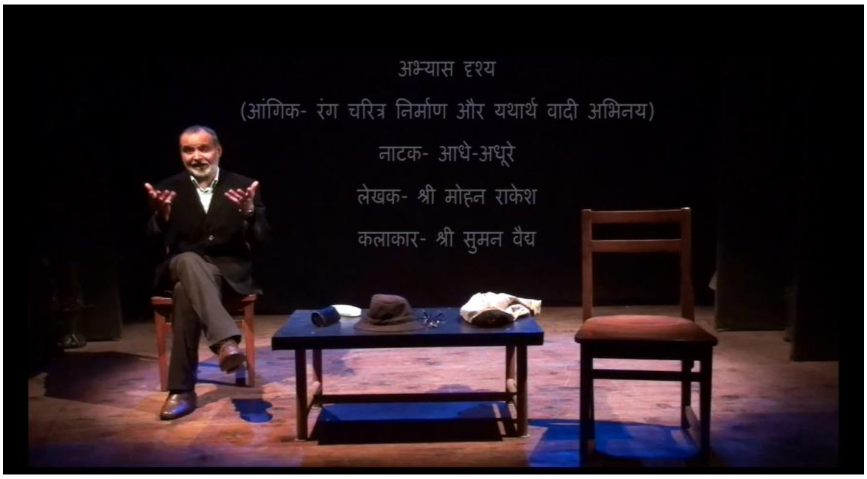

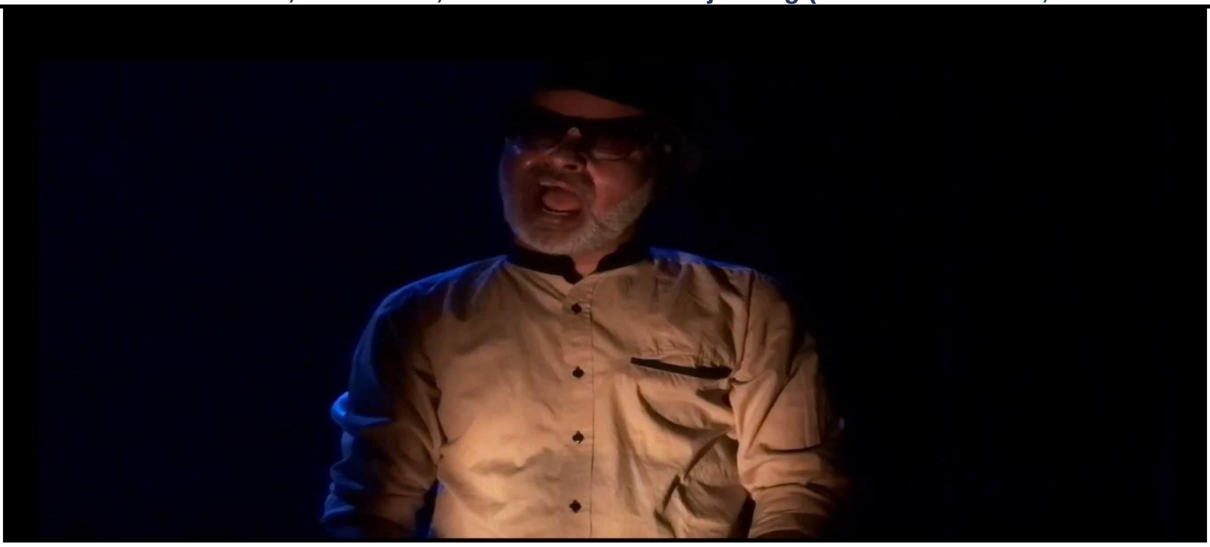

(*आधे अधूरे*, अभिनय: सुमन वैद्य, चलचित्र प्रलेखन: अमित सक्सेना, मार्गदर्शन: श्री डी° आर° अंकुर)

निष्कर्ष एवं सम्भावना

नाटककार मोहन राकेश ने अपने रंग संकेतों एवं मंच सज्जा में भी आधुनिक भाव बोध की अभिव्यक्ति की है। उदाहरण के तौर पर पारिवारिक विघटन का एक जीवन-दृश्य नाटककार ने दिखलाया है, उदाहरण के तौर पर –
(निर्देश) मंच पर- *दो अलग-अलग प्रकाश वृत्तों में लड़का (अशोक) और बड़ी लड़की (बिन्नी) । लड़का सोफे पर औंधा लेट कर टाँगें हिलाता सामने 'पेशेंस' (पत्तों का खेल) के पत्ते फैलाए है।*

बड़ी लड़की पढ़ने की मेज पर प्लेट में रखे स्लाइसों पर मक्खन लगाती। पास में टिन कटर और 'चीज़' (पनीर) का एक डिब्बा । पूरा प्रकाश होने पर कमरे में वह बिखराव नजर आता है जो एक दिन ठीक से देख-रेख न होने से आ सकता है... यहाँ वहाँ चाय की प्यालियाँ अस्त-व्यस्त चीजें ।

सब पात्र एक-दूसरे से विमुख होकर अपनी ज़िन्दगी जी रहे हैं। यहाँ इन सब से आधुनिक युग की विसंगतियों ही प्रकट होती हैं। पुरुष-एक का अखबार की रस्सी बनाना और बाद में उसके टुकड़े-टुकड़े कर देना उसके झुंझलाए मन का क्षोभ है। अशोक का पतलून में कीड़ा महसूस करना तथा उसे मार देना पूंजीपतियों के शोषण को खत्म करने के प्रयास का संकेत है। इसमें नाटककार ने प्रतीकात्मक शैली में पात्रों के जीवन और वातावरण में व्याप्त विघटन और त्रास की अनुभूति का परिचय दिया है।

आधुनिक रंगमंच प्रयोगात्मक मंच सज्जा, विशिष्ट प्रकाश संयोजन, तकनीकी यंत्र जैसे प्रोजेक्टर, चलचित्र स्क्रीन आदि को नाट्य-विन्यास के प्रयोग में भी लाता है। पर चित्राभिनय का प्रमुख उद्देश्य एक अभिनेता द्वारा पात्रों का चित्रण, दृश्यों की प्रस्तुति और द्वंद्व को मानवीय पहलू से दर्शाना है न की इसे कलाकार से दूर करना और चित्राभिनय के सिद्धान्त इस दिशा में उपयोगी सिद्ध होते हैं।

रंग मंच अपने भीतर अनगिनत संभावनाएँ समाये हुए है। जिस धुरी पर मंच जीवंत होता है वह अभिनय ही है। पाश्चात्य अभिनय पद्धति को प्रयोग में लाना केवल यह सोच कर की भारतीय परंपरा समय के साथ नहीं चल पायी सोच की दुर्बलता की ओर इंगित करता है। नयी शिक्षा पद्धति में पुरातन पद्धति को एक नवीन दृष्टिकोण से देखने की बात कही गयी है। (विकासपिडिया पोर्टल, भारत सरकार) चित्राभिनय दिन-प्रतिदिन महंगे होते नाट्यगृह और रंग-सामग्री के परे अभिनय की सृजनात्मक कल्पनाशीलता को तराशने की ओर अग्रसर कर सकता है जिससे एक वैश्विक भाषा, अभिनय द्वारा, रंगमंच के लिए उभारी जा सकती है।

संदर्भ सूची

- भरत (आ. 200 ई.पू. – 200 ई.) *नाट्यशास्त्र,* अभिनवगुप्त की *अभिनव भारती* टीका सहित। संपादक: लक्ष्मण शास्त्री पाणशिकर। वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज़।
- भट्टाचार्य, ह. (1954) *स्टडीज़ इन द नाट्यशास्त्र.* कलकत्ता: कलकत्ता विश्वविद्यालय।
- घोष, म. (1951) *द नाट्यशास्त्र: ए ट्रीयटाइस ऑन हिन्दू ड्रैमेटर्जी एंड हिस्ट्रियोनिक्स* (खंड I–II)। कलकत्ता: कलकत्ता विश्वविद्यालय।
- गोस्वामी, ओ. एन. (1967) *अभिनय इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस.* दिल्ली: मुंशीराम मनोहरलाल।
- झा, ग. (1934) *सम एस्पेक्ट्स ऑफ अभिनय.* वाराणसी: संस्कृत पुस्तकालय।
- पाण्डे, हज़ारी प्रसाद (1969) *भारतीय नाट्यशास्त्र और रूपक- संस्कृति.* प्रयाग: भारतीय विद्या भवन।
- वात्स्यायन, कपिला (1977) *भरत: द नाट्यशास्त्र.* नई दिल्ली: साहित्य अकादेमी।
- द्विवेदी, डॉ पारसनाथ (2015) *नाट्यशास्त्रम्* (अभिनव भारती टीका का हिन्दी अनुवाद संलग्न)
- अंकुर, देवेंद्र राज (2021) *दूसरे नाट्यशास्त्र की खोज,* वाणी प्रकाशन।
- सोनी, राकेश (2016) *संस्कृत रंगमंच: परंपरा तथा संभावनाएँ,* शृंखला एक शोध परख वैचारिक पत्रिका वॉल° III, इशू XI
- राकेश, मोहन (1969) *आधे- अधूरे.* दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- सिंह, सुरेन्द्र वर्मा (1980) 'मोहन राकेश के नाटकों की सामाजिक दृष्टि', *नाटक पत्रिका,* 12(3), पृ. 45–60।
- शुक्ल, रमेश (2005) 'आधे-अधूरे : शहरी मध्यवर्ग का यथार्थ', *समकालीन भारतीय नाटक,* पृ. 113–128।
- गुप्ता, अनिल (2010) *मोहन राकेश: नाटक और समाज.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- शर्मा, मधु (2015) 'अस्तित्ववाद और आधे-अधूरे', *भारतीय नाट्य समीक्षा,* 8(2), पृ. 77–90।
- जैन, नंद किशोर (1991) *आधुनिक हिन्दी नाटक और मोहन राकेश.* दिल्ली: साहित्य भंडार।
- गुरु सोमसुंदरम का साक्षात्कार, टाइम्स ऑफ इंडिया, (टी° रामवरमन द्वारा), 2023
- विनय कुमार, डॉ° सी एम°; चतुर्वेदी, रोमेश (2013) 'आर्ट ऑफ थिएटर ऑन न्यू मीडिया प्लैटफ़ार्म ऐंड आडियन्स वीउइंग एक्सपीरिएन्स', आर्टिक्ल 7, ग्लोबल मीडिया जर्नल, इंडिया एडिशन ISSN 2249-5835, विंटर इशू/ दिसम्बर, 2013/वॉल. 4/न. 2
- *भारत में शिक्षा के उद्देश्य का महत्व* - योगदानकर्ता: XISS, 13/03/2023, विकासपिडिया पोर्टल (https://education.vikaspedia.in/viewcontent/education/education-best-practices/)
- आधे अधूरे 'Angika Characterization Exercise' (डॉक्यूमेंट्री 'नाट्यशास्त्र आंगिक' – मार्गदर्शन श्री देवेंद्र राज अंकुर) https://www.youtube.com/watch?v=8ZfvBlJGRNM&t=13s